Drig Drishya Vivek

दृग्दृश्य विवेक

With Hindi & English Translations

Published by
International Vedanta Mission

Drig Drishya Vivek

of Shri Adi Shankaracharya

(with meaning in Hindi and English)

Published by

International Vedanta Mission

www.vmission.org.in / vmission@gmail.com

१

रूपं दृश्यं लोचनं दृक्
तद्दृश्यं दृक्तु मानसम्।
दृश्याः धीवृत्तयस्साक्षी
दृगेव न तु दृश्यते।।

रूप दृश्य है और नेत्र दृष्टा। ये नेत्र–दृष्टा भी मन की दृष्टि से दृश्य की श्रेणी में आ जाते हैं। मन शब्द से लक्षित सभी वृत्तियाँ भी साक्षी की दृष्टि से दृश्य हैं। यह साक्षी किसी के द्वारा दृश्य नहीं बनता है, अतः वह ही वास्तविक दृष्टा है।

The form is perceived and the eye is its perceiver. The eye is perceived and the mind its perceiver. The mind with its modifications is perceived and the witness is verily the perceiver, but it is not perceived.

२

नीलपीतस्थूलसूक्ष्म
ह्रस्वदीर्घादि भेदतः।
नानाविधानि रूपाणि
पश्येल्लोचनमेकधा।।

हमारी आंख साक्षी बनकर नीला, पीला, स्थूल, सूक्ष्म, छोटा, बड़ा आदि अनेकों प्रकार के रूपों को देखती है।

The forms appear as various on account of such distinctions as blue, yellow, gross, subtle, short, long etc. The eye, on the other hand, sees them, itself remaining one and the same.

३

आन्ध्यमान्द्यपटुत्वेषु
नेत्रधर्मेषु चैकधा।
संकल्पयेन्मनः श्रोत्र
त्वगादौ योज्यतामिदम्।।

उस आंख का अन्धापन, मन्दता या तीक्ष्णता आदि विविध धर्मों को हमारा एक मन जानता है। इसी प्रकार से कर्ण, त्वचा आदि इन्द्रियों के विषयों के बारे में भी समझना चाहिये।

Such characteristics of the eye as blindness, sharpness or dullness, the mind is able to cognize because it is a unity. This also applies to the ear, skin etc.

कामः संकल्पसंदेहौ
श्रद्धाऽश्रद्धे धृतीतरे।
ह्रीर्धीर्भीरित्येवमादीन्
भासयत्येकधा चितिः।।

कामना, संकल्प, संदेह, श्रद्धा, अश्रद्धा, धैर्य, लज्जा, ज्ञान, भय आदि मन की विविध वृत्तियों को भी एक ही साक्षी चेतनता प्रकाशित करती है।

Consciousness illumines desire, determination and doubt, belief and non belief, constancy and its opposite, modesty, understanding, fear and other, because it is a unity.

नोदेति नास्तमेत्येषा
न वृद्धिं याति न क्षयम्।
स्वयं विभात्यथान्यानि
भासयेत् साधनं विना।।

साक्षी चेतनता का न ही उदय होता है, और न ही अस्त होता है। इसमें कोई वृद्धि अथवा क्षय नहीं होते हैं। यह स्वयं प्रकाशित होती है, तथा वगैर किसी साधन की अपेक्षा के अन्य समस्त को प्रकाशित करती है।

This Consciousness does neither rise nor set. It does not increase; nor does it suffer decay. Being self-luminous, it illumines everything else without any other aid.

चिच्छायावेशतो बुद्धौ
भानं धीस्तु द्विधा स्थिता।
एकाहंकृतिरन्या स्यात्
अन्तःकरणरूपिणी।।

बुद्धि में चेतनता का प्रतिबिम्ब पड़ते ही जड़ बुद्धि स्फूर्ति से युक्त हो जाती है। तथा इसमें जानने का सामर्थ्य जग जाता है। तत्पश्चात् यह बुद्धि दो प्रकार की विशिष्ट वृत्तियों से युक्त दिखने लगती है। प्रथम अहंकार और दूसरी अन्तःकरण वृत्ति।

Buddhi appears to possess luminosity on account of the reflection of Consciousness in it. Intelligence is of two kinds. One is designated egoity, the other as mind.

छायाहंकारयोरैक्यं
तप्तायःपिण्डवन्मतम् ।
तदहंकारतादात्म्यात्
देहश्चेतनतामगात् ।।

प्रतिबिम्बित चेतनता और अहंकार का सम्बन्ध तपे हुए लोहे के गोले और अग्नि के समान होता है। अहंकार जब देह से तादात्म्य करता है, तब देह भी चेतनवान् हो जाता है।

In the opinion of the wise, the identity of the reflection and of ego is like the identity of the fire and the iron ball. The body having been identified with the ego passes for a conscious entity.

अहंकारस्य तादात्म्य
चिच्छायादेहसाक्षिभिः।
सहजं कर्मजं भ्रान्ति
जन्यं च त्रिविधं क्रमात्।।

अहंकार का चिदाभास, देह और साक्षी चैतन्य के साथ तादात्म्य क्रमशः सहज, कर्मज और भ्रान्तिजन्य होता है।

The identification of the ego with the reflection of Consciousness, the body and the Witness are of three kinds, namely, natural, due to past karma, and due to ignorance, respectively.

९

सम्बन्धिनोः सतोर्नास्ति
निवृत्तिः सहजस्य तु।
कर्मक्षयात् प्रबोधाच्च
निवर्तेते क्रमादुभे।।

अहंकार का चित्प्रतिबिम्ब के साथ के सहज तादात्म्य है, उसकी निवृत्ति नहीं होती है। किन्तु शेष दो प्रकार के तादात्म्यों की निवृत्ति क्रमशः कर्मक्षय और तत्त्वज्ञान से होती है।

The mutual identification of the ego and the reflection of Consciousness, which is natural, does not cease so long as they are taken to be real. The other two identification disappear after the wearing out of the result o Karma and the attainment of the knowledge of the highest Reality respectively.
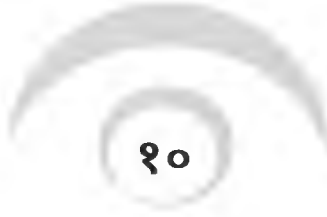
१०

अहंकारलये सुप्तौ
भवेद् देहोऽप्यचेतनः।
अहंकारविकासार्धः
स्वप्नः सर्वस्तु जागरः।।

अहंकार जब पूर्ण लय को प्राप्त होता है, उस समय देह की अचेतनता से लक्षित सुषुप्ति अवस्था प्राप्त होती है। अहंकार के अर्धविकास में स्वप्नावस्था तथा अहंकार के पूर्णविकास से जाग्रत अवस्था प्राप्त होती है।

In the state of deep sleep, when ego disappears the body also becomes unconscious. The state in which there is the half manifestation of the ego is called the dream state, and the full manifestation of the ego is the state of waking.

११

अन्तःकरणवृत्तिश्च
चितिच्छायैक्यमागताः।
वासनाः कल्पयेत् स्वप्ने
बोधेऽक्षैर्विषयान्बहिः।।

बुद्धि की अन्तःकरण वृत्ति भी प्रतिबिम्बित चेतनता के साथ तादात्म्य कर जीवन्त हो जाती है। वासना के अनुरूप स्वप्न जगत् का सृजन करती है। जाग्रत् में भी इसी वृत्ति के द्वारा बाह्य विषयों की कल्पना होती है।

The inner organ which in itself but a modification identifying itself with the reflection of Consciousness imagines ideas in the dream. And the same inner organ imagines objects external to itself in the waking state with respect to the sense-organs.

१२

मनोऽहंकृत्युपादानं
लिंगमेकं जडात्मकम्।
अवस्थात्रयमन्वेति
जायते म्रियते तथा।।

अन्तःकरण वृत्ति–मन तथा अहंकारवृत्ति का उपादान एक ही जड़ लिंगशरीर है। इस लिंग अथवा सूक्ष्म शरीर के आवागमन के कारण ही तीन अवस्थाओं की एवं जन्म–मरण की प्राप्ति होती है।

The subtle body which is the material cause of the mind and egoism is one and of the nature of in sentiency. It moves in the three states and is born and it dies.

१३

शक्तिद्वयं हि मायाया
विक्षेपावृत्तिरूपकम्।
विक्षेपशक्तिर्लिंगादि
ब्रह्माण्डान्तं जगत् सृजेत्।।

माया की दो शक्तियाँ है–विक्षेप शक्ति और आवरण शक्ति। विक्षेप शक्ति लिंग शरीर से लेकर ब्रह्माण्ड तक का सृजन करती है।

Two powers, undoubtedly, are predicated of Maya, viz., those of projecting are veiling. The projecting power creates everything from the subtle body to the gross universe.

१४

सृष्टिर्नाम ब्रह्मरूपे
सच्चिदानन्दवस्तुनि।
अब्धौ फेनादिवत् सर्व
नामरूपप्रसारणा।।

जैसे एक सागर में अनेक फेन–बुद्बुदें आदि रूप उत्पन्न होते है, वैसे ही एक सत् चित् आनन्द स्वरूप ब्रह्म में अनेक नाम और रूपों के प्रसारण हो जाने को सृष्टि कहते है।

The manifesting of all names and forms in the entity which is Existence – Consciousness – Bliss and which is the same as Brahman, like the foams etc. in the ocean, is known as creation.

१५

अन्तर्दृग्दृश्ययोर्भेदं
बहिश्च ब्रह्मसर्गयोः।
आवृणोत्यपरा शक्तिः
सा संसारस्य कारणम्।।

अन्दर दृष्टा और दृश्य का भेद करके, बाहर ब्रह्म और सर्ग के भेदों को माया की आवरण शक्ति ढ़क देती है। यह ही संसार का कारण है।

The other power conceals the distinction between the perceiver and the perceived objects which are cognized within the body as well as the distinction between Brahman and the phenomenal universe which is perceived outside. This power is the cause of the phenomenal universe.

१६

साक्षिणः पुरतो भाति
लिंगं देहेन संयुतम्।
चितिच्छायासमावेशात्
जीवः स्याद् व्यावहारिकः।।

जीव शब्द उस (मन के अन्तर्गत विद्यमान) व्यवहार करने वाले कर्ता के लिये प्रयुक्त होता है, जो साक्षी के अत्यन्त निकट होता है, तथा जो चेतनता की छाया से युक्त होने के कारण ही जीवन्त होता है।

The subtle body which exists in close proximity to the Witness identifying itself with gross body becomes the embodied empirical self, on account of its being affected by the reflection of Consciousness

१७

अस्य जीवत्वमारोपात्
साक्षिण्यप्यवभासते।
आवृत्तौ तु विनष्टायां
भेदे भातेऽपयाति तत्।।

अविवेकी मनुष्य इस जीव के जीवत्व का आरोपण साक्षी में करके उस साक्षी को ही जीव रूप से देखता है। जब विवेक प्राप्त करके जीव एवं साक्षी को यथावत् देख लिया जाता है तब आवरण शक्ति नाश को प्राप्त हो जाती है।

The character of an embodied self appear through false superimposition in the Sakshi also. With the disappearance of the veiling power, the distinction between the seer and the object becomes clear and with it the jiva character of the Sakshi disappears.

१८

तथा सर्गब्रह्मणोश्च
भेदमावृत्य तिष्ठति।
या शक्तिस्तद्वशाद् ब्रह्म
विकृतत्वेन भासते।।

यह आवरण शक्ति ही ब्रह्म और सृष्टि के भेद को भी ढ़क देती है, एवं इसी के कारण ब्रह्म नाम-रूपों के धर्मों से युक्त विकारी भासता है।

Similarly Brahman, through the influence of the power that conceals the distinction between It and the phenomenal universe, appears as endowed with the attributes of change.

१९

अत्राप्यावृत्तिनाशेन
विभाति ब्रह्मसर्गयोः।
भेदस्तयोर्विकारः स्यात्
सर्गे न ब्रह्मणि क्वचित्।

यहाँ पर भी आवरण के नाश होने पर दोनों (ब्रह्म और सृष्टि) का भेद स्पष्ट हो जाता है और विकार मात्र 'सृष्टि में ही होते है ब्रह्म में नहीं' यह बात स्पष्ट हो जाती है।

In this case also, the distinction between Brahman and the phenomenal universe becomes clear with the disappearance of the veiling power. Therefore change is perceived in the phenomenal universe, but never in Brahman.

२०
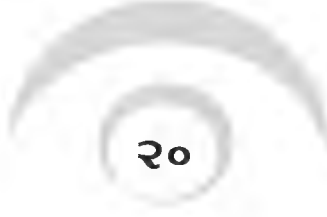
अस्ति भाति प्रियं रूपं
नाम चेत्यंशपंचकम्।
आद्यत्रयं ब्रह्मरूपं
जगद्रूपं ततो द्वयम्।।

जगत् का प्रत्येक विषय पांच अंशों से युक्त होता है। ये अस्ति (होना), भाति (भासित होना), प्रियता, नाम तथा रूप है। इसमें प्रथम तीन ब्रह्मरूप हैं, और शेष दो जगद्रूप हैं।

Every entity has five characteristics, viz., existence, effulgence, lovability, form and name. Of these, the first three are reflection of Brahman, and the next two to the creation.

२१

खं वायु अग्निजलोर्वीषु
देवतिर्यक् नरादिषु।
अभिन्नाः सच्चिदानन्दा
भिद्यते रूपनामनी।।

आकाश, वायु, अग्नि, जल, तथा पृथ्वी महाभूतों से बने जड़ प्रपंच में, तथा देवता, पशु मनुष्य आदि चेतनप्राणियों में सच्चिदानन्द तत्त्व अभिन्न है, भेद मात्र नाम–रूपों की दृष्टि से ही होते है।

The attributes of Existence, Consciousness and Bliss are equally present in the space, air, fire, water and earth as well as in deities, animals and men etc. Names and forms alone make one differ from the other.

२२

उपेक्ष्य नामरूपे द्वे
सच्चिदानन्दतत्परः।
समाधिं सर्वदा कुर्याद्
हृदये वाऽथवा बहिः।।

जगत् शब्द से लक्षित 'नाम और रूपों' की उपेक्षा करके, अपने मन में अथवा बाह्य जगत् में सच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्म को ही सर्वत्र देखते हुए उसी में चित्त को समाहित करने का सतत प्रयास करना चाहिये।

Having become indifferent to name and form and being devoted to Sac-chid-ananda aspects, one should always practice samadhi either within the heart or outside.

२३

सविकल्पो निर्विकल्पः
समाधिर्द्विविधो हृदि।
दृश्यशब्दानुवेधेन
सविकल्पः पुनर्द्विधा।।

अब समाधि का परिचय देते हुए कहते हैं कि समाधि की प्राप्ति दो चरणों में सिद्ध होती है, सविकल्प और निर्विकल्प समाधि। सविकल्प समाधि में भी क्रम से दो स्पष्ट चरण होते हैं – दृश्यानुविद्ध और शब्दानुविद्ध।

Two kinds of Samadhi to be practised in the heart are know as Savikalpa and Nirvikalpa. Savikalpa-Samadhi is again divided into two classes, according to its association with a cognizable object or a scriptural word.

कामाद्याश्चित्तगा दृश्याः
तत्साक्षित्वेन चेतनम्।
ध्यायेद् दृश्यानुविद्धोऽयं
समाधिः सविकल्पकः।।

हृदय में दृश्यानुविद्ध सविकल्प समाधि के अभ्यास हेतु इस तथ्य का समग्रता से अर्थ देखो कि 'कामादि सभी बुद्धि वृत्तियाँ दृश्य हैं, तथा हम उसके साक्षी चेतन तत्त्व हैं।' इसके फलस्वरूप जो अन्तःस्थिति उत्पन्न होती है उसे ही दृश्यानुविद्ध सविकल्प समाधि कहते हैं।

See the desires etc as objects of perception, and see yourself, the consciousness, as their seer. When we deeply meditate on these facts then we glide into an quiet yet awareful state which is called Dryshya prompted Savikalpa-Samadhi, facilitated by seer-seen viveka.

२५

असंगः सच्चिदानन्दः
स्वप्रभो द्वैतवर्जितः।
अस्मीति शब्दविद्धोऽयं
समाधिः सविकल्पकः।।

तत्पश्चात् शब्दानुविद्ध सविकल्प समाधि का अभ्यास करना चाहिये। इसमें शास्त्रोक्त लक्षणाओं को, जैसे असंग, सच्चिदानन्द, स्वप्रकाश, द्वैतरहित तत्व ही मैं हूँ। इन्हें निमित्त बनाकर स्व–स्वरूप का और गहराई से ज्ञान प्राप्त करके समाहित होकर स्थित रहने को शब्दानुविद्ध सविकल्प समाधि कहते हैं।

Using the scriptural pointers as: I am Existence- Consciousness-Bliss, unattached, self-luminous and free from duality etc., one should go deep into the truth of seer, and abide in that Self. This is known as the Savikalpa-Samadhi facilitated by scriptural words.

२६

स्वानुभूतिरसावेशाद्
दृश्यशब्दावुपेक्ष्य तु।
निर्विकल्पस्समाधिस्स्यात्
निवातस्थित दीपवत्।।

दृश्य और शब्दानुविद्ध सविकल्प समाधियों के हेतुभूत तत्त्व-विवेक के फलस्वरूप जब एक तरफ स्वानुभूति के दिव्यरस का अत्यधिक आविर्भाव होता है, तथा दूसरी तरफ विवेकवशात् ही समाहित अवस्था के रस से भी निरपेक्ष होकर निवातस्थ दीप के समान स्थित रहते हैं, तब निर्विकल्प समाधि सहजता से प्राप्त हो जाती है।

The Nirviklpa-Samadhi is that in which the mind becomes steady like the light kept in a place free from wind and in which the student becomes indifferent to both objects and words on account of his complete absorption in the bliss of the realization of the Self.

२७

हृदीव बाह्यदेशेऽपि
यस्मिन् कस्मिंश्च वस्तुनि।
समाधिराद्यस्सन्मात्रात्
नामरूपपृथक्कृतिः।।

जिस प्रकार अपने मन में (दृग्–दृश्य विवेक से प्रारम्भ कर समाधि तक गति हुई) उसी प्रकार बाह्य देश में भी किसी भी विषय को निमित्त बनाकर सर्वप्रथम दृश्यानुविद्ध समाधि सिद्ध करने हेतु विषय के अन्तर्गत सत्स्वरूपता से नामरूप को पृथक् करना चाहिये।

Like the samadhi prompted by drg-dryshya, one should now practice samadhi using any external objects. Here the firsst step is to discriminate between names & forms and pure existence.

२८

अखण्डैकरसं वस्तु
सच्चिदानन्द लक्षणम्।
इत्यविच्छिन्न चिन्तेयं
समाधिर्मध्यमो भवेत्।।

तत्पश्चात् यह सत्ता अखण्ड, एकरस, सच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्म ही है। इस प्रकार किसी न किसी विषय को निमित्त बनाकर सतत तत्त्वविवेक बनाए रखना मध्यम प्रकार की अर्थात् शब्दानुविद्ध सविकल्प समाधि होती है।

The entity which is always of the same nature and unlimited and which is characterized by Existence- Consciousness- Bliss, is verily Brahman. Such uninterrupted reflection is called the intermediate absorption, that is the Savikalpa-Samadhi associated with scriptural word.

स्तब्धीभावो रसास्वादात्
तृतीयं पूर्ववन्मतः।
एतैस्समाधिभिः षड्भिः
नयेत्कालं निरन्तरम्।।

जब स्वानुभूति के रसास्वादन से स्तब्धीभाव तुल्य अवस्था होती है, तब वह तीसरे प्रकार की अर्थात् निर्विकल्प समाधि हो जाती है। इस प्रकार छह समाधि के अभ्यास में अपना काल व्यतीत करना चाहिये।

The insensibility of the mind as before, on account of the experience of Bliss, is designated as the third kind of Samadhi (Nirvikalpa). The practitioner should uninterruptedly spend his time in these six kinds of Samadhi.

देहाभिमाने गलिते
विज्ञाते परमात्मनि।
यत्र यत्र मनो याति
तत्र तत्र समाधयः।।

जिस समय देहाभिमान का नाश तथा परमात्मा का विज्ञान प्राप्त हो जाता है, उसके बाद मन कहीं पर भी जाए वह समाधि अवस्था में ही रमता है।

With the disappearance of the attachment to the body and with the realization of the Supreme Self, to whatever object the mind is directed, one effortlessly revels in Samadhi.

भिद्यते हृदयग्रन्थिः
छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि
तस्मिन् दृष्टे परावरे।।

माया से परे इस दिव्य तत्त्व का दर्शन होने पर हृदय में स्थित अविद्या तथा समस्त कर्मो का क्षय हो जाता है।

By beholding Him who is high and low, the fetters of the heart are broken, all doubts are solved and all his karmas wear away.